अध्याय तीसरा

जैनेन्द्र पर विभिन्न प्रभाव

[अ] जैन दर्शन, गान्धी विचारधारा और जैनेन्द्र ।

[ब] जैनेन्द्र पर फ्रायड का प्रभाव ।

[स] जैनेन्द्र के प्रेरणास्त्रोत-रवीन्द्र टैगोर ।

[द] शरदचन्द्र पात्रों का जैनेन्द्र पर प्रभाव ।

[ई] जैनेन्द्र पर अस्तित्ववादी औपन्यासिक लेखकों का प्रभाव ।

अ] जैन दर्शन, गाँधी-विचारधारा और जैनेन्द्र :-

यह सर्व विदित है, कि धर्म से जैनेन्द्र जैनधर्मीय हैं, और कर्म से गाँधी विचार-धारा के अनुयायी हैं, और इसलिए यह सच है, कि जैनेन्द्र-जीकी औपन्यासिक कृतियों में जैन-सिध्दान्त तथा गाँधी-चिन्तन का प्रभाव दिखाई देता है ।

हिंसा-अहिंसा का प्रश्न प्रत्यक्ष या प्रत्यक्ष रूपसे राजनैतिक तथा तात्विक भूमिका पर से जैनेन्द्रजी ने अपने उपन्यासों में चित्रित किया है । अहिंसा को वे " परम-धर्म " समझाते हैं, इसलिए सशस्त्र क्रान्ति उनको दृष्टिसे स्वतंत्रता प्राप्ति का सही साधन नहीं हो सकता । अपने उपन्यासों में जैनेन्द्र ने कुछ क्रान्तिकारी पात्र चित्रित किए हैं, जैसे " सुनीता " में हरिप्रसन्न " सुखदा " में हरिदा तथा लाल " कल्याणी " में पाल तथा विवर्त में जितेन । जैनेन्द्र का सशस्त्र क्रान्ति में विश्वास नहीं है, अत: इनके पात्र या तो नये युग की आहट पाकर अहिंसात्मक सत्याग्रह की शरण लेते है, अथवा कानून को आत्मसमर्पण करते हैं, तथा, अपने दल को तोड देते हैं ।

" सुखदा " उपन्यास का हरिदा तथा " विवर्त " का जितेन अपने दल का विसर्जन करके अपने को पुलिस के हवाले करा देता है । सशस्त्र क्रान्ति को विसर्जित करने के प्रयत्न में जैनेन्द्रजी ने क्रान्तिकारियों के साथ न्याय नहीं किया है । उनके बहुतसारे क्रान्तिकारी पात्र कामग्रंथी से पीडित है । प्रेम की असफलता उनके मन में हिंसा को जन्म देती है, और इसी हिंसा को जैनेन्द्रजी ने क्रान्तिकारिता का नाम दिया है । गुप्तता, लूटमार, आतंक उनकी विशेषताएँ हैं ।

जितेन दस-बारह युवकों को इकठ्ठा करके दल स्थापन करता है । दल का कार्य है रेल गिराना, परन्तु रेल गिराने का उद्देश क्या है ? बिना किसी उद्देश से यह कार्य हो रहा है । देशभक्ति की महान प्रेरणा इनके पिछे नहीं है । एक " हरिदा " [सुखदा] को छोडकर चारित्रिक विशालता भी अन्य किसी क्रान्तिकारी पात्र में नहीं है । इस तरह जैनेन्द्र जी के उपन्यासों में चित्रित क्रान्तिकारी पात्र अत्यंत दुर्बल सिध्द हुए है । देशभक्ति के लिए वे कुछ करते हुए प्रतीत नहीं होते हैं ।

जैनेन्द्र जी की नायिकाएँ अहिंसा का संबल लेकर जीवन-पथपर अग्रेसर होती है । अहिंसा का पालन अर्थात किसी को दुःख न पहुँचाना और इस तरह की अहिंसा के पालन के लिए आवश्यक है, अपरिमित कष्ट, सहिष्णुता एवं आत्मपीडा । जैनेन्द्र जी की नायिकाएँ घोर से घोर आत्मपीडा सहती हुई दिखाई देती हैं । उदाहरण के तौरपर मृणाल, कल्याणी, सुनीता, भुवनमोहिनी तथा अनिता भी अपने प्रेमी का हृदय-परिवर्तन कराने के लिए अहिंसा का मार्ग अपनाती है । अहिंसा तथा आत्मपीडा जैसे महान साधनों को उपयोग में लाकर भी मृणाल का चरित्र गरिमामय नहीं बन पाया है । वह हमारी सहानुभूती बरबस खींच लेती है । हमारी करुणा को आकृष्ट कर लेती है, परन्तु मृणाल जिन अहिंसा, आत्मपीडा आदि उच्च तत्व को काम में लायी है उनका उतना ऊँचा प्रभाव हमपर नहीं होता है । कोयलेवाले से कृतज्ञता जताने के लिए उसके हृदय को दुःख न पहुँचाने के लिए मृणाल घोर आत्मपीडा सहती है । उसे शरीर दान देती है ।

मृणाल ने अहिंसा, आत्मपीडा, पातिव्रत्य, सतीत्व आदि शब्दों का सहारा लेकर बडी कुशलता से अपने शरीर दान के कृत्य का समर्थन किया है । कोयलेवाले ने मृणाल को सहानुभूति दिखाई है । परन्तु इस तरह की सहानुभूति ही वासना का प्रेरक होती है ।

12542
A

मृणाल कोयलेवाले की क्षणभंगूर वासना का शिकार हो गयी है।
पतिने मृणाल का परित्याग करने के बाद उसका प्रतिकार करने के लिए एक साधन मृणाल के पास था। सत्याग्रह जो गाँधीजी की सबसे बडी सीख है। अपने पातिव्रत्य की रक्षा के लिए पति के द्वार पर ही वह सत्याग्रह करती है, इतना ही नहीं तो प्राण तक त्याग कर देती है। तो मृणाल का चरित्र शायद ऊँचा हो जाता है। वह पति की किसी भी बात का प्रतिवाद नहीं करती, अत: पति का संदेह पुष्ट हो जाता है। भारत में ऐसी पतिव्रता नारियों की कमी नहीं है, जो पति के द्वारा घर से बाहर निकाल जानेपर भी पति के द्वार से टस से मस नहीं होतीं, परन्तु मृणाल ने वह नहीं किया है। पति की इच्छा के विरुद्द घर में रहना वह पातिव्रत्य के खिलाफ समझती है।

जैनेंन्द्रजी की दूसरी बहुचर्चित नायिका है, " सुनीता " जिसके बारे में एक आलोचक ने कहा है, ' रात के समय सुनसान जंगल में हरिप्रसन्न के सामने सुनीता के दिगम्बर हो जाने का रहस्य क्या है? यह गाँधी की अहिंसा का साहित्यिक प्रतिपादन है, और इसके लिए मैं जैनेन्द्रकुमार का बहुत बडा प्रशंसक हूँ। साहित्य के क्षेत्रमें गाँधी की अहिंसा का व्यवहार जैनेन्द्र के अलावा और किसी के द्वारा इतने ऊँचे रूप में नहीं दिखाई पडा। " गाँधी का अहिंसा का मूलतत्व है, सब कुछ सहकर, अपना सब कुछ देकर प्राण विसर्जन तक करके राक्षस वृत्तिवाले आक्रमणकारी, पीडक के मन में दया उत्पन्न करता है। " १ परन्तु " सुनीता " उपन्यास में सुनीता स्वयं हरिप्रसन्न से प्रेम करती है, और अपने शरीर दान से हरिप्रसन्न के पवित्र प्रेम को चुनौति देना चाहती है।

---

१. शिवनाथ, " प्रेमचन्द्रोपर उपन्यास " आलोचना उपन्यास- विशेषांक पृ. ११५, अक्तूबर सन १९५४ ई. डा. सिन्धू भिंगारकर " जैनेन्द्र के उपन्यासों मे नारी चित्रण, पृ. २६४, दिल्ली, मार्च १९७३ ई. से.

परन्तु सुनीता ही क्यों, जैनेन्द्र की अन्य नायिकाएँ जैसे मृणाल अनीता, नीलिमा भी अपने प्रेमीपर शरीरदान से या शारीरिक आकर्षण से विजय प्राप्त करना चाहती है, जो न जैन जीवन दर्शन का अनुसरण है, न गाँधी विचारधारा का प्रतिपादन । दोनों में नारी के शील-चारित्र्य तथा देह की पवित्रता पर काफी बल दिया है । वासनाओं पर विजय प्राप्त कर के नारी शरीर की पवित्रता पर दोनोंने विशेष रूपसे बल दिया है । सदाचरणपर, नैतिक सामर्थ्यपर दोनों ने अपना ध्यान प्रमुखता से केंद्रित किया है । तो फिर जैनेन्द्रजी को नायिकाओं के देहदान के पीछे क्या रहस्य है ? रहस्य यह है कि जैनेन्द्र ऐसे अवसरपर न जैन-धर्मीय रह जाते हैं, न गाँधीजी के अनुचारी ।

आधुनिकतम मनोविज्ञान में काम को उतना देय नहीं समझा जाता है । वह तो एक स्वाभाविक प्रवृत्ति समझी जाती है । इसी आधुनिकता का प्रभाव जैनेन्द्रजी की नायिकाओंपर कुछ अंश तक पडा हुआ है । काम को स्वाभाविक वृत्ति मानते हुए भी जैनेन्द्र के संस्कार उनकोआगे बढने नहीं देते हैं, इसलिए इनकी नायिकाएँ अपने प्रियतम को मुझे समूची ले लो [अनीता] कहकर अथवा निरावरण होकर भी बच पायी है ।

" हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास " इस लेख में प्रो. राजेश्वर, गुरु ने एक स्थानपर लिखा है, " जान पडता है, कि फ्रायड से कुशल, चीर-फाड का काम सीखने के बाद मर्ज का सही-सही पता पा जाने के बाद जैनेन्द्र-कुमार चुपके-चुपके जिसके लिए कहा गया है, कि रहस्यात्मक ढंग से गाँधीवादी इलाज की ओर उन्मुखता दिखाते हैं । " १

१] प्रो. राजेश्वर गुरु " हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास " साहित्य संदेश आधुनिक उपन्यास अन्क, पृ. ३४, जुलई - अगस्त सन १९५६ ई ।
डा. सिन्धू भिंगारकर " जैनेन्द्र के उपन्यासों में नारी चित्रण, पृ. २६५ दिल्ली ।

परन्तु अपने नारी-पात्रों पर जैनेन्द्रजी ने गाँधीवादी, इलाज किया होता, तो उनके नारी-पात्रों का स्वरूप ही अलग होता । गाँधीजी की नारी बडी सशक्त है और तेजस्वी है । गाँधीजी ने समता स्वतंत्रता का समर्थन किया है और उस स्वातंत्र्यसे जीवन को सही दिशा प्राप्त करने के लिए वे सदाचार का नियंत्रण चाहते हैं । गाँधीजी की नारी घुलघुलाकर मर मिटनेवाली नारी नहीं है । जीवन को लुंज-पुंज बनानेवाले बन्धन को तोडने का ही प्रयत्न गाँधीजी करते हैं ।

जैनेन्द्रजी ने अपने हर उपन्यास में प्रेयसीत्व या पत्नीत्व की समस्या उठायी है और पत्नी उनकी दृष्टि से नारी-जीवन का आदर्श है । जैनेन्द्र जी की दृष्टिसे घर ही नारी के जीवन का ध्येय है । राजनीति को उनकी दृष्टि से नारी के लिए निषिध्द [नीलिमा- मुक्तिबोध] क्षेत्र है । उसके विपरीत गाँधीजी जीवन के हर क्षेत्र में प्रतिक कार्य में प्रत्येक क्षण, नारी को अपने साथ समानता से ले चलने को इच्छुक है । वे मानते है कि ज्ञान और विज्ञान दोनों का समान अधिकार हैं । खेत, कारखाने, सामाजिक कार्य, तथा राजनीति दोनों का क्षेत्र है । अतः स्पष्ट है, कि जैनेन्द्र जी की नारी भावनापर उनके जैन संस्कारों का प्रभाव है । जो नारी को मुक्ति का अधिकार नहीं देता । आज की सामाजिक स्थिति के कारण जैन महिलाओं को अनायास कुछ स्वतंत्रता मिली है, सो बात अलग । और उतनी ही स्वतंत्रता जैनेन्द्र नारी को देना चाहते हैं । समस्या तो उन्होंने ली हैं । " घर " या " बाहर " की, पर लौट फिर कर इनकी नारी अन्तमें घरकी चहार दीवारों में वापस आयी हुई मिल जाती है, क्यों कि प्रेमसेवा, त्याग, आत्म बलिदान से ही तो जीवन संपूरित होता है । जैनेन्द्रजी की दो नायिकाएँ गाँधीजी की विचार धारा से कुछ अंश तक साधर्म रखती हैं । " परख " उपन्यास में कट्टो बिहारी को अपने बन्धन में बाँध लेती है । " वैधाव्यपन्न " में बिहारी का

साथ प्राप्त करती है । कट्टो-बिहारी का ब्याह होता है, परन्तु यह ब्याह अनोखा ब्याह है, जिसमें " दोनों दूर हैं, फिर भी बिलकुल पास । अलग फिर भी अभिन्न । दो फिर भी एक । एक ही उद्देश्य, एक ही जीवनलक्ष्य में पिरोये हुए । महाशून्य इस विवाह का साक्षी है । " कट्टो-बिहारी " के इस अनोखे विवाह में गाँधीजी के विवाह और ब्रम्हचर्य के विचारों की छाया दीख पडती है । स्त्री-पुरुष सम्बन्ध में गाँधीजी के विचार इसी तरह के कुछ आध्यात्मिक उच्च आदर्शों को लिए हुए हैं ।

" जयवर्धन " उपन्यास की नायिका इला अविवाहित होकर भी जयवर्धन के साथ रहती है । वह जयवर्धन की अभिन्न संगिनी है फिर भी पूर्ण ब्रम्हचारिणी । जयवर्धन और इला के शारीरिक सम्बन्धों की पवित्रता दोनों के जीवन को बहुत ऊँचे स्तर तक उठा देती हैं । उनके रात्र तक [स्वामी चिदानन्द] दोनों के अवैध सम्बन्धों के प्रमाण की खोज में हैं, परन्तु उनको भी प्रमाण नहीं मिल रहा है । नर-नारी का यह अशरीरी सम्बन्ध किन्तु प्रगल्भ प्रेम सम्बन्ध गाँधी दर्शन से अधिक मिलता-जुलता है ।

जैनों का अनेकान्तवादी दृष्टिकोण भी जैनेन्द्र जी ने अपने कुछ उपन्यासोंमें विशिष्ठ अर्थ से अपनाया है । एक पात्र को समझाने के लिए केवल एक ही व्यक्ति का एक दृष्टिकोण अपूर्ण होगा । व्यक्ति जीवन के विभिन्न पहलू होते हैं । व्यक्ति जीवन का संपूर्ण सत्य समझाने के लिए केवल एक ही धारणा से काम नहीं चलेगा । अनेक दृष्टिकोणों से उनके जीवनपर प्रकाश डालना होगा, इसलिए जैनेन्द्र ने अपने औपन्यासिक पात्रों में अनेकान्त-वादी दृष्टिकोण अपनाया है । जैसे " कल्याणी " उपन्यास में श्रीधर का कल्याणी के बारेमें दृष्टिकोण, वकील साहेब का कल्याणी के बारे में दृष्टि-कोण, पाल का कल्याणी के बारे में मत आदि बातों से कल्याणी के

चरित्रपर प्रकाश डालने का प्रयत्न लेखक ने किया है । " जयवर्धन " में जयवर्धन और इला दोनों का चरित्र लेखक के सामने है । मित्र हूस्टन, आचार्य चिदानन्द, इन्द्रमोहन आदि पात्रों द्वारा जयवर्धन और इला के चरित्र को अनेक दृष्टिकोणोंसे होनेवाली धारणाएँ हमारे सामने रही हैं । एक ही व्यक्ति या वस्तु की तरफ अनेक दृष्टिकोणों से देखने का अभिनव प्रयोग जैनेन्द्र ने बड़ी कुशलता से अपने उपन्यासों में किया है ।

मूल्यांकन -

इस तरह उपरि निर्दिष्ट विवेचन में स्पष्ट होता है, कि जैनेन्द्र के उपन्यासों पर जैन दर्शन तथा गाँधी विचार धारा का न्यूनाधिक मात्रा में प्रभाव परिलक्षित होता है । जहाँ जैन दर्शन के तत्व गाँधी विचारधारा के माध्यम से आये हैं । वहाँ दोनों विचारों का एक उत्कृष्ट समन्वय भी दृष्टिगत होता है ।

सूक्ष्म अध्ययन से ज्ञात होता है कि जैनेन्द्रजी के पात्र न केवल जैन दर्शन तथा गाँधी विचारधारा से ही प्रभावित हैं अपितु आधुनिक पाश्चात्य चिन्तन धारा का भी पर्याप्त प्रभाव उनपर दिखाई देता है । जिसका विवेचन आगे किया गया है ।

ब] जैनेन्द्र पर फ्रायड का प्रभाव :-

जैनेन्द्रजी के उपन्यासों में हमें बाह्य घटनाओं की अपेक्षा मानसिक संघर्ष का ही उहापोह अधिक दीखा पड़ता है । जैनेन्द्रजी ने जिन चरित्रों की उद्भावना की है, वे मानसिक धरातल पर ही अधिक विचारणा करते हैं ।

" जैनेन्द्र के बहुतसारे पात्र मानवशरीरी प्राणी हैं, जो अपनी भीतरी घुमडन के कारण वर्ग प्रतिनिधि पात्रों की मर्यादा लाकर व्यक्ति चरित्र बन गये है । " १

जैनेन्द्र जी चाहते है, कि पात्रों के अचेतन मन का संशोधान कर के उसमें पडी हुई संचित राशी को प्रकाश में लाये, क्यों, कि मनुष्य जैसे उपर से दीखा पडता है, वैसे ही वह नहीं होता । एक और भी कुछ शक्ति होती है, जो उसके व्यक्तित्व को संचालित करती है । इस दृष्टि से मनुष्य के अचेतन मन के रहस्योद्घाटन का प्रयत्न जैनेन्द्र के उपन्यासों में हुआ है । फिर भी जैनेन्द्र को हम फ्रायडवादी नहीं कह सकते क्यों, कि फ्रायड के सिध्दान्तों के साथ उनके दार्शनिक सिध्दांत भी उतने ही प्रबल है । सबसे महत्व की बात यह है कि जैनेन्द्र जी स्वयं फ्रायड को जानने से इन्कार करते हैं । उन्होंने लिखा है - " मैं ने फ्रायड का अध्ययन नहीं किया है, लेकिन व्यक्तित्व के मूल में फ्रायड की भागवत्ता स्वीकार नहीं है, जो उन के लिए है, वह दिव्यत्व नहीं है । इस तरह स्वप्नों की उनकी व्याख्या मुझे ज्यों-की- त्यों मान्य होगी इसमें मुझे सन्देह है । " २

---

१. रणवीर रांग्रा - " हिंदी उपन्यासों में चरित्र - चित्रण का विकास " पृ. ३४३, सन १९६१ ई. । भारती साहित्य मंदिर, दिल्ली ।

२. जैनेन्द्रकुमार " समय और हम ", पृ. ५८०, सन १९६५ ई. । पूर्वोदय, दिल्ली ।

क] जैनेन्द्र के प्रेरणा-स्त्रोत-रवीन्द्र :-

बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में भारतीय जन-जीवन नव-विकास की प्रकाश किरणों से प्रदीप्त होने लगा था । क्या सामाजिक, क्या राजनैतिक, क्या धार्मिक, क्या साहित्यिक, हर क्षेत्र में उन्नति के लिए अपूर्व त्यागमय व्यक्तियों का निर्माण हुआ । महात्मा गाँधी, जवाहरलाल, अरविन्द, रमण महर्षि, जगदीशचन्द्र बोस, रवीन्द्रनाथ टैगोर आदि हिमालय जैसे उत्तुंग विश्वविख्यात दैदीप्यमान नर-रत्न इसी काल में अवतरित हुए । साहित्य के क्षेत्र में रवीन्द्रनाथ की उज्वल प्रतिभा के द्वारा भारतीय जन-मानस मुखर हो उठा । " रवीन्द्र " की काव्य-साधना बडी प्रखर थी । " उनकी काव्य-साधना में भारतीय मानस का वह अस्पष्ट आवेग और आकांक्षा साकार हो उठी, जिसका सर्व प्रधान मंत्र अबतक निषेधात्मक था । नवीन स्वाधीनता के स्वप्न से भारतीय जन-मानस ग्रहणशील हो उठा । " १

महाकवि रवीन्द्रनाथ की बहुमुखी प्रतिभा के बारे में हजारी प्रसाद द्विवेदीजी लिखते हैं, " रवीन्द्रनाथ का व्यक्तित्व बहुत विशाल था । उनकी रचनाओं का परिणाम और गांभीर्य अतुलनीय हैं । साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र में उन्होंने अपने अद्भुत प्रतिभा के बलपर अत्याधिक समृध्द बनाया है, कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, प्रबन्ध, समालोचन आदि के क्षेत्र में उन्हों ने भारतीय साहित्य को जो कुछ दिया है वह अपूर्व और अपरिमेय है, किन्तु साहित्य के बाहर भी शिक्षा, राजनीति, धर्मनृत्य, चित्रकला आदि विविध विषयों में इतना किया है कि साहित्य का विद्यार्थी आश्चर्य भरी मुद्रा से देखता ही रह जाता है । " २

---

१. सं. तारिणी शंकर चक्रवर्ती, रविन्द्र प्रवाह पृ. २१२ [डा] सिन्धु भिंगारकर जैनेंद्र उपन्यासों में नारी चित्रण पृ. २९२ दिल्ली मार्च १९७३ ई.

२. हजारी प्रसाद द्विवेदी उमेशचन्द्र मिश्र लिखित विश्वकवी रवीन्द्रनाथ की भूमिका से पृ. १. जैनेन्द्र उपन्यासों मे नारी चित्रण पृ. २९२, २९३. १९७३ई

महाकवि की इस प्रगल्भ प्रतिभा का प्रभाव करीबन सभी भारतीय भाषाओं के साहित्यपर प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष रूपसे परिलक्षित होता है । हिन्दी भी इन प्रभाव किरणों से प्रकाशित हो उठी । हिन्दी के छायावादी, रहस्यवादी कवियोंपर रवीन्द्र की प्रतिभा की छाप स्पष्ट रूपसे दीख पडती है । उपन्यास क्षेत्र में भी रवीन्द्र का अनुकरण हुआ है । हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार जैनेन्द्र जी रवीन्द्रनाथ से अत्याधिक प्रभावित हुए है । अपनी पुस्तक " ये और वो " में उन्होंने रवीन्द्रनाथ ठाकुर और उनकी जो मुलाकातें हुई थीं इसलिए उनके बारे में जैनेन्द्र जी के मनमें आदर की भावना विद्यमान है । यह दिखाई देता है ।

जैनेन्द्र बचपन से ही रवीन्द्रनाथ की कहानियाँ पढते आये हैं । वे मन ही मन विश्व कवि को पूजा करते आये हैं । उनके ही शब्दों में - " वे तो मान लो देवलोक के देव पुरुष थे " । १

प्रथम ही मुलाकात में जैनेन्द्र प्रत्यक्ष उनके व्यक्तित्व से अत्याधिक प्रभावित होकर रवीन्द्रनाथ के बारे में लिखते हैं " चेहरा मानो मनुष्य से अधिक देवमूर्ति का हो, मैं नहीं मान सकता था, कि वह देवता है क्यों कि मनुष्य होना उससे बडी बात देवता है । इससे देवता नहीं चाहता था, पर समक्ष देवोपमता के अतिरिक्त कुछ मिल ही नहीं रहा था " । २

---

१. जैनेन्द्रकुमार, " ये और वो " पृ. १ पूर्वोदय, दिल्ली १९५४ ई ।

२. जैनेन्द्रकुमार, " ये और वो " पृ. ७ पूर्वोदय, दिल्ली, १९५४ ई ।

इस तरह देखें तो जैनेन्द्र जी के व्यक्तित्व और कृतित्व इन दोनों पर रवीन्द्र के साहित्य का गहरा प्रभाव हमें दिखायी देता है । रवीन्द्र जी के उपन्यासों में मिलनेवाली मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मता हमें जैनेन्द्र के उपन्यासों में मिल जाती है । साथ ही साथ नारी-जगत के बारे में रवीन्द्रनाथ के कुछ विचार है, उनका भी प्रभाव है । रवीन्द्र ने नारी के स्वतंत्र होने के लिए अपने उपन्यासों में जो विवेचन किया है, उसी प्रकार जैनेन्द्रजी ने अपने भी औपन्यासिक कृतियों में सूक्ष्म विचार किया है ।

इस प्रकार जैनेन्द्रपर रवीन्द्रनाथ ठाकुर का प्रभाव हमें दिखाई देता है ।

ड] शरद्चन्द्र चटर्जी का जैनेन्द्रपर प्रभाव :- शरद् के उपन्यासें की प्रधान विशेषता है, " नारी के प्रति उनका दृष्टिकोण । " शरद की नारी जाती को हिमायती कहा जाता था । समाज से ठुकराई गई अनेक समस्याओं से घिरी हुई असहाय नारी का प्रतिनिधित्व शरद के उपन्यासों ने किया है । राजलक्ष्मी, किरणमयी, कमल जैसे नारियों को उन्होंने अपने हृदय को सहानुभूति से सिंचित किया है और उनको न्याय देने की भरसक कोशिश की है । " शरद के नारी हृदय के रहस्य को खोलने को चेष्टा की है, और नारी को न्याय संगत मर्यादा दी है । उन्होंने दिखाया, कि समाज ने जिनको कलंकिनी कहकर पंगत के बाहर कर दिया, वे हृदय को पवित्रता और अनुभूति के गौरव में असाधारण हो सकती है ।" १

१] डा. सुबोधचन्द्र सेन " शरत् प्रतिमा " पृ. २४०१
डा: सिन्धू भिंगारकर, " जैनेन्द्र के उपन्यासों में नारी चित्रण पृ. २९७ दिल्ली मार्च १९७५ से उधृत ।

अपने " नारी का मूल्य " इस निबन्ध में शरद ने प्रत्यक्ष रूप से नारी-जाति पर किये गये अत्याचारों का सूक्ष्म और विस्तृत वर्णन किया है । स्मृति-ग्रन्थ, शास्त्र, धर्म के बन्धन किस तरह नारी जाति के प्रति अन्यायी रहे हैं, इसका उन्होंने उदाहरणों के साथ वर्णन किया है । शरद का विचार है कि शास्त्रों ने सतीत्व का एक बड़ा दौवा तैयार कर रखा है जो नारी के विकास को राहुग्रस्त कर रहा है । सतीत्व की वेदी पर नारी का बलिदान ही दिया गया है । आज समय आया है, कि नारी का वास्तविक मूल्य समझा जाय । गृहिणी पद का भार उस पर लादकर घर की चहारदीवारी में ही उसका जीवन पंगु न बनाया जाय ।

"नारी का मूल्य " शीर्षक प्रबन्ध में आये हुए विचारों से तथा साहित्य में निर्माण किये हुए पात्रों से शरत् को " दुर्नीति का प्रचारक " कहकर पुरान पंथियों ने अपमानित, लांछित भी किया है । फिर भी शरत् की प्रतिभा कुंठित नहीं हुई । शरत् की दृष्टि में परम्परागत नैतिक मूल्यों का कोई स्थान नहीं था । बंधी-बंधाई धारणाओं से नीति-अनीति की सूक्ष्म-परख करना असम्भव है यही शरत् की धारणा थी । नीति-अनीति का मापदण्ड है प्रेम और सहानुभूति । शरत् की अधिकांश कहानियाँ प्रेम कहानियाँ है । विवाह सफल होता है और अप्रत्याशित प्रेम सफल होता है, परन्तु यह सफलता दैहिक न होकर आत्मिक है ।

" शरत् की नारियों के प्रेम में सेक्स की प्रधानता नहीं है, उनके पारस्पारिक सम्बन्ध सामान्य ऐंद्रियता से रहित है, इसलिए शरत् की कृतियों में स्नेह की निर्मल मन्दाकिनी बहती है, वासना की कलुषित वैतरिणी नहीं"।१

---

१. रामवरुम चतुर्वेदी - " शरत् के नारीपात्र " पृ. ३०१.
डा. सिन्धू भिंगारकर, जैनेन्द्र के उपन्यासों में नारी चित्रण पृ. २९८ दिल्ली ।

नारी के सतीत्व के बारे में शरत् के विचार बडे क्रान्तिकारी हैं, उनके अनुसार देश और काल के साथ सतीत्व की धारणाएँ बदलती है । साहित्य में आर्ट और दुनीति इस निबन्ध में शरत् ने कहा है, " परिपूर्ण मनुष्यत्व . सतीत्व की अपेक्षा बडी है । " नारी के सतीत्व के जयजयकार के नारे लगाने वाले भारत देश में शरत् के इन विचारों का कितना विरोध किया गया होगा, इसकी कल्पना ही की जा सकती है । इस दृष्टि से एकनिष्ट प्रेम और सतीत्व ठीक एक ही वस्तु नहीं हैं । शरत् के अनुसार सतीत्व तन की वस्तु न रहकर मन की दीप्ति बन जाता है । जहाँ मन की पवित्रता है वहाँ तन की मजबूरी है, न पतिव्रता है न अपवित्रता मानव धर्म सतीत्व से बडा है, क्योंकि वह जीवन को मुक्त करता है, बांधता नहीं ।

जैनेन्द्र के उपन्यास-साहित्य के अन्तरंग में शरत् सूक्ष्म रूप से प्रतिष्ठित है । जैनेन्द्र के साहित्य में भी सतीत्व की समस्या बडे प्रकर्ष से हमारे सामने आयी है । तन-मन के विभाजित करण से जैनेन्द्र की शायद ही कोई नायिका बची हो ।

" त्यागपत्र " के मृणाल के सतीत्व की कल्पनाएँ शरत् के चिन्तन का सूक्ष्म अंश लिए हुए हैं । जो प्रचलित कल्पनाओं को धक्का देने वाली प्रतीत होती है । कट्टो प्यार करती है, सत्यधन से, तो ब्याह करती है बिहारी से । कल्याणी ने ब्याह किया है डा. असरानी से परन्तु मन-ही-मन पूजा करती है, प्रीमियर की । भुवनमोहिनी, सुखदा, अनिता सभी की हालत एक सी है । जिस से प्रेम किया है उससे ब्याह नहीं हो सकता है,

अतः प्रेम और विवाह दोनों में अविरत संघर्ष चलता है, और इस संघर्ष में जैनेन्द्र की नायिकाओं की विशेषता यह है, कि वे ब्याहता होने पर भी अपने प्रिय को शरीर देने को तैयार हैं । फिर सतीत्व कहाँ रहा ?

परन्तु जैनेन्द्र की सतीत्व की कल्पना की नींव का सूक्ष्म आधार शरत् की कल्पनाओं में ढूँढा जा सकता है । इसके बारे में डा. भटनागर जी लिखते हैं, " वास्तव में जैनेन्द्र के साहित्यिक व्यक्तित्व के निर्माण में शरत् का योगदान ही कदाचित सबसे अधिक रहेगा । उनके साहित्य सम्बन्धी आदर्शों एवं मान्यताओं पर शरत् की छाप स्पष्ट है । " १

---

१. रामरतन भटनागर –
जैनेन्द्र साहित्य और समीक्षा,
साहित्य प्रकाशन, दिल्ली संस्करण
१९५८ ई ।

ई] जैनेन्द्र पर गेस्टाल्टवादी औपन्यासिक तंत्र का प्रभाव :-

औपन्यासिक तंत्र की दृष्टि से उपन्यास के शिल्प के नव-निर्माण के समय जैनेन्द्र जी में गेस्टाल्ट के सिध्दान्तों की झलक दीखा पडती है । तंत्रमें उन्होंने गेस्टाल्टवादी दृष्टिकोण अपनाया है । कथा की कडियाँ तोड दी हैं, जैसे तीन बिन्दुओं को जोडकर त्रिकोण की कल्पना हमारी आँखों के सामने आती है, वैसे जैनेन्द्र की अपेक्षा है, कि कथा के कुछ अंशों से हम कथा की कल्पना करें । पात्रों के संभाषण भी उसी तरह से [illegible] सूचित किये हैं । इन संकेतों से पूर्ण विचारों के आकलन का काम उन्होंने पाठकों पर छोड दिया है । " अत: डा. देवराज उपाध्यायजी ने कहा है, कि जैनेन्द्र गेस्टाल्टवादी हैं, तो वह बात सत्य है, परन्तु वह बात सत्य है, परन्तु वह तंत्र के क्षेत्र में विशेष रूपसे लागू होती है । किन्तु वह तो उपन्यास की बाह्य रचना की बात हुई, मुख्यत: जैनेन्द्रजी मनुष्य के मानस को प्रवृत्तियों का, दमित वासनाओं का, कुंठाओं का विश्लेषण करना चाहते हैं, इस विश्लेषण के लिए गेस्टाल्ट - वादियों को अपेक्षा फ्रायड के सिध्दान्तों ने ही उनको सहायता अधिक की है । फिर भी बाह्य तंत्र का जहाँ प्रश्न है, जैनेन्द्रजीपर गेस्टाल्ट के कुछ सिध्दान्तों का प्रभाव मानना ही पडेगा । "१

---

१. देवराज उपाध्याय, " आधुनिक हिन्दी कथासाहित्य, और मनोविज्ञान, " साहित्य भवन प्रा. लि. इलाहाबाद. प्रथम संस्करण सन १९५६ ई. ।

निष्कर्ष :-

संक्षेप में इस अध्याय में जैनेन्द्रजी पर जो विविध प्रभाव पडे हैं, उनको विवेचना की है । उनमें दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, साहित्यिक तथा भारतीय और पाश्चात्य हैं । इनमें से किसी का प्रभाव जैनेन्द्रजी मानते हैं, तो किसीसे इन्कार करते हैं । जैन दर्शन, गाँधी विचार धारा तथा रवीन्द्र और शरत् का प्रभाव जैनेन्द्रजी स्वयं मान्य करते हैं । उनके साहित्य में ये प्रभाव प्रत्यक्ष रूपसे दिखाई देते हैं ।

कुछ प्रभाव ऐसे हैं, जो जैनेन्द्रजी को मान्य नहीं हैं, जैसे फ्रायड, सार्त्र तथा गेस्टॉल्ट के मनोविज्ञान के प्रभाव । हो सकता है कि ये प्रभाव आलोचकों से आरोपित हो, क्यों, कि उनके साहित्यमें इन प्रभाओंका अप्रत्यक्ष झलक दीख पडती है । इन चिन्तकोंको न जानते हुए भी सहज उत्स्फुर्त साहित्य निर्माण में इन चिंतकों के चिन्तनका विचार-धाराओं का तथा पात्रों के चरित्र का निर्माण हुआ है ।

इन प्रभावों को मान्य करते हुए भी जैनेन्द्रजी की अपनी विशेषात: ही साहित्य में उनका विशिष्ट स्थान निर्माण करनेमें समर्थ हुई है ।